ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.21, No2, April – June, 2026/271

भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में समकालीन पारिवारिक विघटन : समाज कार्य हस्तक्षेप

यतीन्द्र मिश्र एवं रवि कुमार

https://doi.org/ 10.61410/had.v21i2.302

सारांश

भारतीय समाज में परिवार केवल एक सामाजिक-कानूनी अनुबंध न होकर जीवन-दर्शन, नैतिक मूल्यों और सामाजिक सुरक्षा का आधार रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में दार्शनिक, नैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य में समकालीन समाज में बढ़ते पारिवारिक विघटन का एक व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। समकालीन परिदृश्य में आधुनिकता, पश्चिमीकरण, तीव्र औद्योगिकीकरण, अनियंत्रित शहरीकरण, उपभोक्तावाद और डिजिटल क्रांति जनित व्यक्तिवादी जीवनशैली ने पारंपरिक संयुक्त परिवार की सुदृढ़ संरचना को शिथिल कर दिया है। जिसका प्रभाव सामाजिक जीवन के बदलते स्वरूप में देखा जा सकता है। जैसे - वैवाहिक विच्छेद, अंतःपीढ़ीगत संघर्ष तथा वृद्धों, युवाओं व बालकों में मानसिक-भावनात्मक असुरक्षा जैसी गंभीर स्थितियां उत्पन्न हो रहीं हैं। यह अध्ययन पारंपरिक वैदिक संस्कारों, नैतिक मूल्यों, सामाजिक प्रतिमानों तथा समकालीन समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से पारिवारिक ढाँचे का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। प्रस्तुत अध्ययन में राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5, UN-DESA, IIPS, OECD और विश्व स्वास्थ्य संगठन की नवीनतम रिपोर्ट्स इत्यादि द्वितीयक तथ्यों को आधार बनाया गया है, जिसके आधार पर विदित होता है कि पारिवारिक स्थिरता ही व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का मूल है। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में पारिवारिक विघटन की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए एक युगानुकूल समन्वित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। साथ ही व्यावसायिक समाज कार्य की व्यावहारिक उपादेयता तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 के अनुरूप नीतिगत ढांचे को प्रस्तुत करता है।

मूल शब्द: भारतीय ज्ञान परंपरा, पारिवारिक विघटन, संयुक्त परिवार, मूल्य-आधारित जीवन-पद्धति, वैवाहिक विच्छेद, सामाजिक पूँजी, समाज कार्य हस्तक्षेप, राष्ट्रीय शिक्षा नीति।

प्रस्तावना

परिवर्तन प्रकृति का एक शाश्वत, सार्वभौमिक और अपरिवर्तनीय नियम है। मानव समाज की कोई भी संस्था, कितनी ही सुदृढ़ और प्राचीन क्यों न हो, समय के प्रवाह, जनसांख्यिकीय संक्रमण और सांस्कृतिक संक्रमण से अछूती नहीं रह सकती है। मानव इतिहास के आदिकाल से ही 'परिवार' समाज की एक केंद्रीय, मूलभूत, सार्वभौमिक और अपरिहार्य संस्था रही है, जो सामाजिक सुदृढ़ता और मानवीय मूल्यों के संरक्षण का प्राथमिक आधार रहा है। भारतीय समाज की वैश्विक विशिष्टता उसकी सुदृढ़ सामाजिक संरचना, गहन सांस्कृतिक मूल्यों और अक्षुण्ण पारिवारिक व्यवस्था में निहित रही है। भारतीय संस्कृति और उसके बहुआयामी दृष्टिकोण में परिवार को समाज की केवल एक आधारभूत इकाई न मानते हुए, बल्कि परिवार को संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का प्राणतत्त्व माना गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा में विविध संदर्भ निहित हैं कि परिवार महज एक जैविक सह-

- **शोध निर्देशक, विभागाध्यक्ष एवं सह-आचार्य, समाज कार्य विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ०प्र०)**
- **शोधार्थी, समाज कार्य विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ०प्र०)**

निवास अथवा विधिक औपचारिकता संस्था तक सीमित नहीं रहा है; बल्कि मानव जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक और आर्थिक उन्नयन की सबसे महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली पाठशाला रहा है। भारतीय ज्ञान परम्परा में पारिवारिक संबंधों को केवल रक्त संबंधों के रूप में नहीं देखा गया बल्कि पारिवारिक संबंधों को सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक उत्तरदायित्व के रूप में देखा गया। वैदिक वांग्मय, उपनिषदों, स्मृतियों, महाकाव्यों और विभिन्न ग्रंथों में यह साक्ष्य विदित हैं कि भारतीय समाज की दीर्घकालिक स्थिरता और उसकी सांस्कृतिक निरंतरता का मूल आधार सदैव से पारिवारिक सुदृढ़ता ही रही है। समकालीन पारिवारिक विघटन पर उपलब्ध अधिकांश अध्ययन पाश्चात्य दृष्टिकोण पर आधारित हैं, जबकि भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में अध्ययन सीमित हैं। भारत में वर्तमान में प्रचलित व्यावसायिक समाज कार्य अभ्यास में भी पारिवारिक संरचना एवं परंपरागत दृष्टिकोण का समावेश देखने को नहीं प्राप्त होता है। इसी संदर्भ में प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में समकालीन पारिवारिक विघटन के कारणों, प्रभावों एवं समाज कार्य हस्तक्षेपों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

साहित्य पुनरावलोकन:

1. Kane, P. V. (1974). History of Dharmasastra के अंतर्गत विश्लेषित किया है कि आर्थिक मूल्य: प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में पारिवारिक अर्थव्यवस्था का मूलाधार 'सह-उत्पादन', 'सह-भोज' और संसाधनों का समतामूलक वितरण था। अथर्ववेद स्पष्ट घोषणा करता है कि परिवार के सभी सदस्यों का अन्न भाग और जल श्रोत समान होना चाहिए, जिससे आर्थिक विषमता के कारण उत्पन्न होने वाले मनमुटाव की संभावना समाप्त हो जाती थी। इसके साथ ही, ईशोपनिषद् का प्रथम मन्त्र "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः" (त्यागपूर्वक उपभोग) परिवार के आर्थिक व्यवहार में अपरिग्रह और असंग्रहवृत्ति को स्थापित करता था, जो आधुनिक उपभोक्तावादी होड़ और तत्जनित पारिवारिक कलह को रोकने में सक्षम है। **महाकाव्य कालीन** व्यवस्था दर्शाती है कि परिवार संकट के समय एक सामूहिक आर्थिक सुरक्षा कवच की भांति कार्य करता था।

2. Prabhu, P. H. (1995). Hindu Social Organization: A Study in Socio-Psychological and Ideological Foundations के अंतर्गत सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्य: गृह्यसूत्रों और स्मृतियों में वर्णित दृष्टिकोण परिवार को केवल जैविक संबंधों का समूह नहीं, बल्कि मूल्य, कर्तव्य, सहयोग, सह-अस्तित्व और सामाजिक समरसता की एक जीवंत सांस्कृतिक संस्था के रूप में देखता है। गृह्यसूत्रों में वर्णित 'षोडश संस्कार' व्यक्ति के व्यक्तिकरण को रोककर उसका समाजीकरण करते थे। इसके अतिरिक्त, मनुस्मृति का यह विधान कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" स्पष्ट करता है कि पारिवारिक स्थिरता और नैतिक अनुशासन के लिए स्त्री की गरिमा और सम्मान सर्वोपरि शर्त है। भारतीय वांग्मय 'ऋण-सिद्धान्त' (देव, ऋषि और पितृ ऋण) के माध्यम से व्यक्ति को अधिकार-केंद्रित होने के स्थान पर कर्तव्य-केंद्रित बनाता है, जहाँ पितृ ऋण से मुक्ति का मार्ग भावी संतति का नैतिक पोषण और परिवार तंत्र का संरक्षण ही है।

3. Dey, T., & Goli, S. (2025). Examining the role of modernization and urbanization in family changes in India में विश्लेषित किया है कि वर्तमान समय में, तीव्र नगरीकरण, पश्चिमीकरण, औद्योगीकरण, पाश्चात्य उपभोक्तावाद और अत्यधिक व्यक्तिवादी जीवनशैली के संयुक्त प्रभाव के कारण बढ़ती बेरोजगारी, नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों के क्षरण से भारतीय पारिवारिक संरचना और संबंधों के अंतर्निहित प्रतिमानों में अभूतपूर्व और चिंताजनक परिवर्तन एवं बदलाव देखे जा रहें हैं। पारंपरिक संयुक्त परिवार प्रणाली तेजी से विघटित होकर नाभिकीय और एकल-अभिभावक परिवारों में परिवर्तित होती चली जा रही है। इस संरचनात्मक परिवर्तन के साथ-साथ संबंधों में भावनात्मक दूरी, वैवाहिक अस्थिरता (तलाक और अलगाव की बढ़ती दर), पीढ़ीगत संघर्ष तथा वृद्धजनों की उपेक्षा जैसी गंभीर सामाजिक-मनोवैज्ञानिक चुनौतियाँ उत्पन्न हो रही हैं।

शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में समकालीन पारिवारिक विघटन के समाधान हेतु समाज कार्य हस्तक्षेपों की भूमिका एवं प्रासंगिकता का विश्लेषण किया गया है।

1. भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुसार पारिवारिक संरचना का सम्पूर्ण अध्ययन।
2. समकालीन भारतीय समाज में पारिवारिक विघटन के कारणों का अध्ययन।
3. पारिवारिक विघटन के बहुआयामी प्रभावों का मूल्यांकन।
4. भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल्य-आधारित पारिवारिक सिद्धांतों का समकालीन संदर्भ में समन्वित विश्लेषण।
5. पारिवारिक सुदृढ़ीकरण और पारिवारिक पुनर्गठन में समाज कार्य व्यवसाय की भूमिका एवं सुझाव।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिसके लिए वाचनालय विधि एवं विषयवस्तु विश्लेषण का प्रयोग किया गया है। अध्ययन की प्रकृति वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक है। इसके अंतर्गत भारतीय ज्ञान परंपरा से संबंधित ग्रंथों, पुस्तकों, शोध पत्रों, इंटरनेट स्रोतों तथा विभिन्न द्वितीयक साहित्यिक स्त्रोतों का उपयोग करते हुए समकालीन पारिवारिक विघटन एवं समाज कार्य हस्तक्षेपों का अध्ययन किया गया है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में परिवार की अवधारणा एवं स्वरूप

भारतीय ज्ञान परंपरा में धर्म को जीवन एवं समाज का आधार माना गया है तथा परिवार को धर्म के व्यावहारिक पालन का प्रथम केंद्र माना गया है। परिवार ही व्यक्ति को कर्तव्य, सम्मान, सेवा और नैतिक मूल्यों का संस्कार प्रदान करता है। तैत्तिरीय उपनिषद् का यह अमर उद्घोष: "मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव" एक प्रमुख उदाहरण है। ऋग्वैदिक और उत्तरवैदिक काल में परिवार का 'गृह', 'कुल' या 'कुटुंब' के रूप में वर्णन मिलता है। यह व्यवस्था किसी अधिकार-बोध पर टिकी हुई नहीं थी, बल्कि पारस्परिक उत्तरदायित्व, धर्म (कर्तव्य) और सामाजिक समरसता का एक जीवंत ताना-बाना थी। प्राचीन भारतीय समाज में परिवार व्यवस्था के ऐतिहासिक और परंपरागत दृष्टिकोण के अध्ययन से विदित होता है भारतीय पारिवार व्यवस्था अत्यंत सुव्यवस्थित, संस्कारित और सामाजिक सुरक्षा से परिपूर्ण थी। पाश्चात्य दर्शन जहाँ व्यक्ति को एक पूर्णतः स्वतंत्र, संप्रभु और एकाकी इकाई के रूप में देखा जाता है, वहीं भारतीय दर्शन में व्यक्ति की पहचान को उसके परिवार, वंश, गोत्र और व्यापक समुदाय से जोड़कर देखा जाता है। भारतीय सामाजिक संरचना में परिवार को व्यक्ति और वृहद् समाज के बीच संवाद और अंतर्संबंधों को जोड़ने वाले एक सुदृढ़ सेतु के रूप में जाना जाता है।

प्राचीन भारतीय दर्शन में व्यक्ति के जीवन को चार आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास) बांटा गया है, जिसमें गृहस्थ जीवन को सर्वाधिक महत्त्व एवं सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया है, क्योंकि शेष तीनों आश्रमों के सदस्यों के भौतिक, सामाजिक और आर्थिक पोषण का संपूर्ण दायित्व गृहस्थ आश्रम पर ही निर्भर करता था। वैदिक काल में नारी को 'गृहलक्ष्मी' और 'जायेदस्तम' अर्थात 'स्त्री ही घर है' का गौरवपूर्ण पद प्राप्त था। गृह-निर्माण से लेकर बड़े सामाजिक और धार्मिक अनुष्ठानों में गृहपति और गृहपत्नी दोनों को ही समान अधिकार और दायित्व प्राप्त थे। पारिवारिक संबंधों में कड़वाहट के स्थान पर मधुरता, बड़ों का सम्मान, छोटों के प्रति निश्छल स्नेह और व्यक्तिगत अधिकारों के स्थान पर 'कर्तव्यबोध' और 'त्याग' भारतीय परंपरागत व्यवस्था के मूल स्तंभ थे। यह संयुक्तता न केवल आर्थिक सुरक्षा (जैसे बीमारी, बुढ़ापा या अकाल) प्रदान करती थी, बल्कि आधुनिक समाज की मानसिक व्याधियों जैसे अवसाद, अकेलापन और सामाजिक असुरक्षा से भी व्यक्ति की रक्षा करती थी।

भारतीय ज्ञान परंपरा में पारिवारिक संबंधों को केवल रक्त-संबंधों तक सीमित न मानकर नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उत्तरदायित्व के रूप में भी देखा गया है। महापनिषद् का "वसुधैव कुटुम्बकम्" सिद्धांत समस्त मानवता को एक परिवार मानने की सार्वभौमिक दृष्टि प्रदान करता है। पारंपरिक भारतीय समाज संयुक्त परिवार व्यवस्था पर आधारित था, जो सामाजिक सहयोग, पारस्परिक दायित्वों और सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण का प्रभावी माध्यम रहा है। इरावती कर्वे (1965) के अनुसार, भारतीय नातेदारी व्यवस्था ने सामाजिक एकता और स्थिरता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। साथ ही, परिवार आर्थिक दृष्टि से भी एक आत्मनिर्भर इकाई था, जहाँ कृषि, पशुपालन एवं कुटीर उद्योगों में सामूहिक श्रम के माध्यम से आजीविका संचालित होती थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी परिवार-आधारित आर्थिक व्यवस्था को सामाजिक सुदृढ़ता और राज्य की समृद्धि का आधार माना गया है

भारतीय ज्ञान परंपरा के अंतर्गत परिवार को केवल जैविक, विधिक या आर्थिक संविदा नहीं माना गया है; अपितु इसे 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की वैश्विक उदात्त भावना को साकार करने वाली प्राथमिक पाठशाला तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे पुरुषार्थों की प्राप्ति का मुख्य साधन स्वीकार किया गया है। वर्तमान में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) के अंतर्गत भारतीय ज्ञान परंपरा के पुनरुत्थान पर विशेष बल दिया जा रहा है, जो इस बात की पुष्टि करता है कि प्राचीन स्वदेशी मूल्य आधुनिक सामाजिक व्याधियों के समाधान में अत्यंत प्रासंगिक हैं।

समकालीन पारिवारिक विघटन का स्वरूप:

समकालीन 21वीं सदी के उत्तर-आधुनिक परिदृश्य में बात करें तो तीव्र वैश्वीकरण, पश्चिमीकरण, औद्योगिकीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति, अत्यधिक व्यक्तिवादिता और भौतिकवादी दृष्टिकोण ने इस सामाजिक ताने-बाने को गहरे स्तर पर प्रभावित एवं विखंडित किया है। वर्तमान समय में पति-पत्नी के संबंधों में बढ़ता मानसिक तनाव, अहम का टकराव, अंतःवैयक्तिक संवादहीनता और डिजिटल उपकरणों के अत्यधिक उपयोग के कारण आभासी दुनिया में खोए रहने की प्रवृत्ति ने वास्तविक पारिवारिक रिश्तों में गंभीर दरारें उत्पन्न कर दी हैं। आधुनिक समाज में पारिवारिक संरचना का स्वरूप अत्यंत तीव्र गति से परिवर्तित हो रहा है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था का आधार रहे संयुक्त परिवार का स्वरूप धीरे-धीरे विखरता जा रहा है। इसका स्थान सूक्ष्म एवं एकाकी परिवार लेते जा रहे हैं। पारिवारिक विघटन की इस समकालीन प्रक्रिया का सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव महिला अस्मिता और बाल मनोविज्ञान पर पड़ रहा है। जहाँ एक ओर आधुनिक भारतीय स्त्रियाँ शिक्षित और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के बावजूद पितृसत्तात्मक मानसिकता और बदलते सामाजिक परिवेश के बीच अपने अधिकारों और स्वाभिमान की रक्षा के लिए संघर्ष करते हुए पारिवारिक विघटन का दंश झेलने को विवश हैं। वहीं दूसरी ओर माता-पिता के अलगाव के बीच बच्चों का सुकुमार बचपन भावनात्मक असुरक्षा की आग में पूरी तरह बिखर रहा है। इस तरह यह स्पष्ट हो रहा है कि पारिवारिक विघटन दिनों-दिन समकालीन भारतीय समाज के समक्ष एक संकट बनकर उभरा है। यह संकट परिवार के भौतिक रूप से टूटने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भावनात्मक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर भी दिखाई देता है। संयुक्त परिवारों का एकल परिवारों में रूपांतरण, वैवाहिक अस्थिरता, तलाक की बढ़ती प्रवृत्ति, पीढ़ियों के बीच संवादहीनता तथा पारिवारिक मूल्यों में परिवर्तन इसके प्रमुख स्वरूप हैं। आधुनिकता, व्यक्तिवाद, नगरीकरण, आर्थिक आत्मनिर्भरता और डिजिटल जीवनशैली ने पारिवारिक संबंधों की प्रकृति को प्रभावित किया है, जिसके परिणामस्वरूप परिवारों में आत्मीयता, सहयोग और सामंजस्य की भावना कमजोर पड़ती जा रही है।

समकालीन पारिवारिक विघटन के मुख्य कारण

आर्थिक कारक: रोजगार हेतु ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों में तीव्र प्रवासन, महिलाओं की बढ़ती आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा उपभोक्तावादी जीवनशैली के कारण जीवन-यापन की उच्च लागत।

सामाजिक-सांस्कृतिक कारक: पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से 'सामूहिकता' के स्थान पर 'व्यक्तिवाद' का उदय हुआ, वर्तमान में पीढ़ीगत वैचारिक अंतर तथा पारंपरिक सहनशीलता, त्याग जैसे मूल्यों का तेजी से ह्रास देखने को मिल रहा है।

बच्चों के व्यक्तित्व एवं मानसिक स्वास्थ्य पर आघात: परिवार, बच्चे के प्राथमिक समाजीकरण का प्रमुख केंद्र होता है। माता-पिता के वैवाहिक द्वंद्व, अलगाव या एकल परिवार की संवादहीनता के कारण बच्चों में भावनात्मक असुरक्षा, अवसाद, चिंता और बाल अपराध जैसी प्रवृत्तियों में निरंतर वृद्धि देखी जा रही हैं।

वृद्धजनों की उपेक्षा एवं सामाजिक असुरक्षा: भारत में संयुक्त परिवार वृद्धों के लिए एक स्वाभाविक सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क था। इसके बिखरने से वृद्धों में एकाकीपन, मानसिक तनाव और स्वास्थ्य संबंधी देखभाल का अभाव जैसी गंभीर चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं। जिसके कारण वृद्धों को वृद्धा आश्रम का शरण लेना पड़ रहा है।

सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक पूँजी का क्षरण: परिवार, समाज में अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण का सबसे सशक्त साधन है। पारिवारिक मूल्यों के कमजोर होने से समाज में नैतिक विचलन, नशाखोरी और अन्य असामाजिक व्यवहारों में वृद्धि देखी जा सकती है।

वैवाहिक परंपराओं का बदलता स्वरूप एवं मूल्य-विचलन: भारतीय संस्कृति में विवाह एक पवित्र संस्कार माना गया है, जिसका उद्देश्य केवल दाम्पत्य जीवन नहीं, बल्कि परिवार एवं समाज की स्थिरता भी है। किंतु आधुनिकता, पाश्चात्य प्रभाव और बदलती जीवनशैली के कारण विवाह की पारंपरिक अवधारणा में परिवर्तन आया है। परिणामस्वरूप विलंबित विवाह, लिव-इन रिलेशनशिप तथा तलाक की बढ़ती प्रवृत्ति वैवाहिक मूल्यों में आए विचलन को दर्शाती है।

डिजिटल अलगाव : सोशल मीडिया और आभासी संसार का प्रभाव: सूचना प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया ने मानव जीवन को अधिक सुविधाजनक एवं वैश्विक बनाया है, किंतु इसके कारण पारिवारिक संबंधों में संवाद और आत्मीयता में कमी भी आई है। आज परिवार के सदस्य भौतिक रूप से साथ रहते हुए भी मानसिक रूप से एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं। आभासी संसार में अत्यधिक व्यस्तता के कारण वैवाहिक एवं पारिवारिक संबंधों में अविश्वास, असंतोष तथा संवादहीनता बढ़ी है, जिससे सहयोग, साझेदारी और पारस्परिक उत्तरदायित्व जैसे पारिवारिक मूल्य कमजोर पड़ रहे हैं।

बाल मनोविज्ञान एवं अंतःपीढ़ी संघर्ष: पारिवारिक विघटन का सबसे अधिक प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। माता-पिता के बीच निरंतर तनाव, अलगाव या तलाक के कारण बच्चों में असुरक्षा, भावनात्मक अस्थिरता तथा हीनभावना का विकास हो रहा है। वहीं संयुक्त परिवारों के विघटन से बच्चों को पारंपरिक स्नेह, मार्गदर्शन और नैतिक संस्कारों का पर्याप्त वातावरण नहीं मिल पाता। इसके परिणामस्वरूप आक्रामकता, अंतर्मुखता तथा पीढ़ियों के बीच संवादहीनता बढ़ती है, जो आगे चलकर अंतःपीढ़ी संघर्ष और सामाजिक विचलन का कारण बन सकती है।

भारतीय ज्ञान परंपरा : समकालीन पारिवारिक विघटन के समाधान का आधार

भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित पारिवारिक मूल्य वर्तमान में विघटित होते परिवार को पुनर्स्थापित करने में अत्यधिक प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण हैं: जो निम्न अवधारणाओं द्वारा स्पष्ट हैं-

'कर्तव्य' और 'ऋण' की अवधारणा: पाश्चात्य मॉडल सिर्फ व्यक्तिगत अधिकारों, उपभोक्तावादी जीवन शैली की बात करता है, जब कि भारतीय परंपरा कर्तव्य और 'पितृ ऋण/देव ऋण' जैसी अवधारणाओं के माध्यम से व्यक्ति को परिवार के प्रति त्याग, सहयोग और जिम्मेदारी का बोध कराती है और परिवार को एक धागे में पिरोए रखने में मदद करता है।

सह-अस्तित्व और पारस्परिक सम्मान: "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" का वास्तविक भाव पारिवारिक संरचना के भीतर लैंगिक समानता, महिलाओं के सम्मान और बच्चों एवं वृद्धों के प्रति करुणा और सेवा की भावना को अनिवार्य बनाता है।

संस्कार आधारित समाजीकरण: भारतीय समाज में 16 संस्कारों का प्रचलन रहा है यह केवल धार्मिक कर्मकांड नहीं थे, बल्कि वे व्यक्ति को जीवन के विभिन्न चरणों में सामाजिक उत्तरदायित्वों का बोध कराने और पीढ़ीगत ज्ञान के हस्तांतरण के सशक्त साधन थे।

पारिवारिक एकता एवं सामूहिकता की भावना: भारतीय ज्ञान परंपरा में परिवार को केवल व्यक्तियों का समूह नहीं, बल्कि एक भावनात्मक एवं सामाजिक इकाई माना गया है। इसमें व्यक्तिगत हितों की अपेक्षा सामूहिक हितों को अधिक महत्व दिया जाता है, जिससे परिवार में एकता, सहयोग और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित होती है।

त्याग, सेवा एवं समर्पण का भाव: भारतीय पारिवारिक व्यवस्था त्याग, सेवा और समर्पण जैसे मूल्यों पर आधारित रही है। परिवार के सदस्य एक-दूसरे के प्रति निःस्वार्थ भाव से कार्य करते हैं, जिससे पारस्परिक विश्वास एवं भावनात्मक संबंध सुदृढ़ होते हैं।

वृद्धजनों का सम्मान एवं पीढ़ियों के मध्य सामंजस्य: भारतीय संस्कृति में वृद्धजनों को ज्ञान, अनुभव और परंपरा का वाहक माना गया है। उनका सम्मान तथा पीढ़ियों के मध्य संवाद और सामंजस्य परिवार की स्थिरता एवं सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

धर्म एवं नैतिक मूल्यों पर आधारित पारिवारिक जीवन: भारतीय ज्ञान परंपरा में पारिवारिक जीवन धर्म, सत्य, करुणा, संयम और सदाचार जैसे नैतिक मूल्यों पर आधारित है। ये मूल्य परिवार के सदस्यों के आचरण को दिशा प्रदान करते हैं तथा पारिवारिक संबंधों में स्थायित्व और सौहार्द की भावना स्थापित करते हैं।

परिवार सुदृढ़ीकरण हेतु समाज कार्य हस्तक्षेप

समकालीन पारिवारिक विघटन की समस्या के समाधान एवं परिवार सुदृढ़ीकरण हेतु समाज कार्य की व्यावहारिक उपादयेता अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। पश्चिमी समाज कार्य जहाँ समस्या उत्पन्न होने के बाद संकट प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित करता है, वहीं भारतीय ज्ञान परंपरा के संवर्धन एवं समन्वय पर आधारित दृष्टिकोण 'निवारक और संवर्धनात्मक' पद्धति पर अधिक बल प्रदान करता है। पारिवारिक विघटन की समकालीन जटिलता को देखते हुए समाज कार्य हस्तक्षेपीय प्रारूप के बहुस्तरीय एवं समन्वित रूप को अपनाने की आवश्यकता है। परिवार सुदृढ़ीकरण हेतु समाज कार्य हस्तक्षेप को मुख्यतः प्राथमिक स्तर, द्वितीयक स्तर एवं तृतीयक स्तर पर क्रियान्वित किया जा सकता है –

प्राथमिक स्तर:

विवाह-पूर्व परामर्श: आधुनिक वैयक्तिक समाज कार्य तकनीकों के साथ भारतीय ज्ञान परंपरा के 'गृहस्थ धर्म' के सिद्धांतों को जोड़कर युवाओं को विवाह की जिम्मेदारी और पारस्परिक सहिष्णुता के प्रति जागरूक करना।

द्वितीयक स्तर:

पारिवारिक मध्यस्थता और परामर्श: पारिवारिक विवादों और पीढ़ीगत संघर्षों के समाधान हेतु न्यायालयों के स्थान पर सामुदायिक स्तर पर 'पारिवारिक परामर्श केंद्रों' की स्थापना करना, जहाँ आधुनिक साइको-थेरेपी के साथ भारतीय दर्शन की 'सहनशीलता और संवाद' विधियों का उपयोग हो। जिससे न्यायालय में लंबे समय तक लंबित निर्णय से बचा जा सके और तात्कालिक समस्या समाधान हेतु परिवार परामर्श केंद्र अत्यधिक कारगर होगा।

तृतीयक स्तर:

वृद्धजन और बाल संरक्षण नेटवर्क: एकल परिवारों के सामाजिक एकाकीपन को दूर करने के लिए 'इंटर-जनरेशनल को-लिविंग स्पेस' का विकास करना, जहाँ डे-केयर सेंटर (बच्चों के लिए) और ओल्ड-एज होम (वृद्धों के लिए) एक साथ संचालित हों, जिससे वृद्धों का अकेलापन दूर हो और बच्चों को अनौपचारिक संस्कार मिल सकें।

पारिवारिक मूल्य शिक्षा: विद्यालयों और सामुदायिक केंद्रों में "वसुधैव कुटुम्बकम्" और 'सामूहिक कल्याण' की शिक्षा देना ताकि अत्यधिक व्यक्तिवाद को नियंत्रित किया जा सके।

सुझाव

भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में समकालीन पारिवारिक विघटन को रोकने हेतु सुझाव निम्नलिखित हैं-

संस्थागत स्तर पर: शिक्षण संस्थानों में प्रारंभिक एवं माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों में 'भारतीय ज्ञान परंपरा एवं संस्कार आधारित दृष्टिकोण को वैज्ञानिक एवं तर्क आधारित दृष्टिकोण से जोड़कर पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया जाए, ताकि प्रारंभिक शैक्षणिक जीवन में सामाजिक मूल्यों को ग्रहण किया जा सके।

नीतिगत स्तर पर: राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा और परिवार कल्याण नीतियों में 'व्यक्ति' को इकाई मानने के साथ-साथ 'परिवार' को भी एक सुदृढ़ इकाई के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता है। ग्रामीण और शहरी नियोजन में ऐसी आवास योजनाओं और रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने को प्राथमिकता दी जाए जो संयुक्त या विस्तारित परिवारों के सह-निवास को प्रोत्साहित करें जिससे सभी सदस्य एक साथ रहकर पारिवारिक गतिविधियों में सहयोग कर सकें।

तकनीकी नियमन: परिवारों के भीतर डिजिटल संवादहीनता को कम करने के लिए सामुदायिक स्तर पर 'डिजिटल डिटॉक्स' अभियानों और 'पारिवारिक समय' जैसी सांस्कृतिक प्रवृत्तियों एवं सहयोगात्मक गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाए, जिससे परिवार के सदस्य एक दूसरे के साथ सामूहिक गतिविधियों में शामिल हो सकें, सहयोग कर सकें जिससे उनके बीच आपसी संबंध प्रगाढ़ हो सके।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि समकालीन पारिवारिक विघटन आधुनिक समाज की एक अत्यंत जटिल और बहुआयामी समस्या है। वैश्वीकरण, औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण और आर्थिक गतिशीलता ने जहाँ व्यक्ति को स्वतंत्रता और आर्थिक आत्मनिर्भरता (विशेषकर महिलाओं को सशक्तिकरण) प्रदान की है, वहीं पारंपरिक पारिवारिक सुदृढ़ता, भावनात्मक समर्थन तंत्र और अनौपचारिक सामाजिक सुरक्षा तंत्र को गंभीर क्षति पहुंचाई है। भारतीय ज्ञान परंपरा में अंतर्निहित मूल्यों - सहयोग, सह-अस्तित्व, त्याग, कर्तव्य परायणता, नैतिकता और अनुशासन इत्यादि समकालीन समाज में परिवार के विघटन के संरक्षण हेतु बहुत ही प्रासंगिक है तथा प्रभावी संवर्धनात्मक की भूमिका अदा कर सकते हैं। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष अनूदित होते हैं कि समाज कार्य के क्षेत्र में पाश्चात्य सिद्धांतों का अंधानुकरण करने के स्थान पर, भारतीय समाज की विशिष्ट सांस्कृतिक और पारिवारिक प्रकृति के अनुकूल एक 'देशज और समन्वित समाज कार्य हस्तक्षेपीय मॉडल' को अपनाया जाए जो समय की मांग है। भारतीय जीवन-दर्शन के पारिवारिक मूल्यों को आधुनिक परामर्श तकनीकों के साथ जोड़कर ही हम एक स्वस्थ, सामंजस्यपूर्ण और स्थिर समाज एवं राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं, जो समाज की संस्कृति, आदर्श एवं मूल्यों को संजोए रखेगा और समाज के सर्वांगीण विकास में अपनी प्रासंगिकता प्रतिरूपित कर पाएगा।

संदर्भ

1. Altekar, A. S. (1956). The Position of Women in Hindu Civilization: From Prehistoric Times to the Present Day (2nd ed.). Motilal Banarsidass.

2. Karve, I. (1965). *Kinship Organization in India* (3rd ed.). Asia Publishing House.

3. Prabhu, P. H. (1995). *Hindu Social Organization: A Study in Socio-Psychological and Ideological Foundations*. Bombay: Popular Prakashan.

4. Kangle, R. P. (2010). *The Kautiliya Arthashastra* (Vols. I–III). Motilal Banarsidass.

5. Rigveda. (2014). The Rigveda (R. T. H. Griffith, Trans.). Motilal Banarsidass. (Original work composed ca. 1500 BCE).

6. Atharvaveda. (2014). The Atharvaveda (R. T. H. Griffith, Trans.). Motilal Banarsidass. (Original work composed ca. 1000 BCE).

7. Sharma, S., & Sharma, P. (2022). *Indian Knowledge System: An Emerging Perspective in Education*. *Journal of Indian Education, 48*(1), 5–16.

8. Mondal, S., & Pradhan, M. R. (2024). Trends, patterns and determinants of family structure in India: A perspective of three decades. Marriage & Family Review, 61(2), 185–225. https://doi.org/10.1080/01494929.2024.2427150

9. Dey, T., & Goli, S. (2025). Examining the role of modernization and urbanization in family changes in India: Evidence from panel data analyses. Journal of Family History, 51(1), 20–50. https://doi.org/10.1177/03631990251376548

10. Sinha, V. K. (2025). Indian families in the era of economic liberalization and globalization: A sociological analysis of structural, functional and emotional changes. International Journal of Research - GRANTHAALAYAH, 13(11), 24–35.

https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v13.i11.2025.6504

11. पाण्डेय, राजबली. (2008). *हिन्दू संस्कार*. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन.

12. आहूजा, राम. (2020). *भारतीय सामाजिक व्यवस्था*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन्स.

13. सिंह, सुरेन्द्र. (2021). *भारत में समाज कार्य : दर्शन एवं पद्धति*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन्स

डॉ0 यतीन्द्र मिश्र ymbu1504@gmail.com Mob. No. 9452347685

रवि कुमार ईमेल ravik14495@gmail.com Mob. No. 8957249170